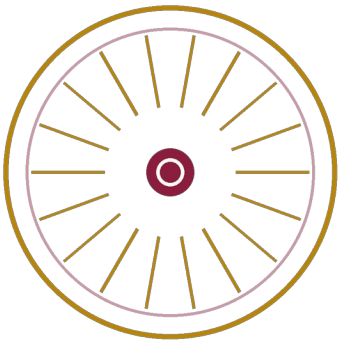

अध्याय 3: कर्मयोग

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.01 - 3.02**

> ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन |
> तल्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव || **01** ||
> व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे |
> तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् || **02** ||

हिन्दी अनुवाद:

अर्जुन ने कहा—हे जनार्दन! यदि आप कर्म की अपेक्षा ज्ञान को श्रेष्ठ मानते हैं, तो फिर हे केशव! आप मुझे इस घोर युद्ध (कर्म) में क्यों लगाते हैं? आप मिले-जुले वचनों से मेरी बुद्धि को मोहित कर रहे हैं, इसलिए निश्चय करके एक बात कहिए जिससे मेरा कल्याण हो।

सरल व्याख्या:

अर्जुन दुविधा में है। दूसरे अध्याय में भगवान ने ज्ञान की प्रशंसा की और फिर युद्ध करने को भी कहा। अर्जुन को लग रहा है कि यदि ज्ञान (बैठकर चिंतन करना) ही श्रेष्ठ है, तो फिर कर्म की भाग-दौड़ और हिंसा क्यों? वह अपने कल्याण का सीधा रास्ता पूछना चाहता है। वास्तव में, यह हम सबकी दुविधा है—क्या संसार को छोड़कर भक्ति करना श्रेष्ठ है या संसार में रहकर कर्तव्य करना?

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... साधक जब ज्ञान और कर्म के समन्वय को नहीं समझ पाता, तो उसके मन में दुविधा पैदा होती है, जिसका समाधान गुरु द्वारा ही संभव है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.03**

> लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ |
> ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् || **03** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्री भगवान बोले—हे निष्पाप अर्जुन! इस लोक में दो प्रकार की निष्ठाएँ (साधना मार्ग) मेरे द्वारा पहले कही गई हैं—सांख्य योगियों के लिए 'ज्ञानयोग' और योगियों के लिए 'कर्मयोग'।

सरल व्याख्या:

भगवान स्पष्ट करते हैं कि मंज़िल एक ही है, पर मार्ग दो हैं। जो विचार प्रधान हैं और बुद्धि से सत्य को खोजते हैं, उनके लिए 'ज्ञानयोग' है। जो क्रिया प्रधान हैं और कर्म के माध्यम से ईश्वर को पाना चाहते हैं, उनके लिए 'कर्मयोग' है। भगवान यह भी संकेत देते हैं कि अर्जुन के स्वभाव के लिए कर्मयोग ही श्रेष्ठ है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... मनुष्य की मानसिक प्रवृत्ति के अनुसार साधना के मार्ग अलग-अलग हो सकते हैं, पर गंतव्य एक ही है।

श्लोक संख्या: **3.04**

> न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते |
> न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति || **04** ||

हिन्दी अनुवाद:

मनुष्य न तो कर्मों को न करने से 'नैष्कर्म्य' (निष्कामता) को प्राप्त होता है और न ही केवल कर्मों के त्याग (संन्यास) मात्र से सिद्धि को प्राप्त होता है।

सरल व्याख्या:

लोग समझते हैं कि काम छोड़ देना ही संन्यास है, पर भगवान कहते हैं कि हाथ-पैर रोक लेने से मन शांत नहीं होता। असली निष्कामता तब आती है जब कर्म किए जाएँ पर उनमें फल का मोह न हो। कर्मों से भागे बिना उन्हें कुशलता से करना ही वास्तविक सिद्धि का मार्ग है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्मों से भागना समाधान नहीं है, बल्कि कर्मों के प्रति दृष्टिकोण बदलना ही समाधान है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.05**

> न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् |
> कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः || **05** ||

हिन्दी अनुवाद:
निश्चित रूप से कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षण मात्र के लिए भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता; क्योंकि सारा मनुष्य समुदाय प्रकृति के गुणों द्वारा विवश होकर कर्म करने के लिए बाध्य है।

सरल व्याख्या:
यह जीवन का एक अटल सत्य है। जब हम सो रहे होते हैं, तब भी सांस लेना, पाचन होना और हृदय का धड़कना जारी रहता है। हमारा स्वभाव (सत्, रज, तम गुण) हमें हमेशा कुछ न कुछ करने के लिए प्रेरित करता रहता है। चूंकि कर्म अनिवार्य है, इसलिए उसे अज्ञान में करने के बजाय ज्ञान के साथ करना ही बुद्धिमानी है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्म करना मनुष्य की विवशता और प्रकृति का स्वभाव है, अतः कर्म का पूर्ण त्याग असंभव है।

श्लोक संख्या: **3.06**

> कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् |
> इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते || **06** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो मनुष्य कर्मेन्द्रियों को तो रोक लेता है, किन्तु मन से उन इन्द्रियों के विषयों का चिंतन करता रहता है, वह मूढ़ बुद्धि वाला 'पाखंडी' या 'मिथ्याचारी' कहा जाता है।

सरल व्याख्या:
यह उन लोगों के लिए चेतावनी है जो बाहर से तो महात्मा बनते हैं पर भीतर से सांसारिक इच्छाओं में डूबे रहते हैं। अगर शरीर शांत है पर मन वासनाओं में दौड़ रहा है, तो वह साधना नहीं, धोखा है। ऐसा दमन केवल मानसिक विकृति पैदा करता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... बाहरी त्याग से अधिक महत्वपूर्ण आंतरिक शुद्धि है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.07**

> यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन |
> कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते || **07** ||

हिन्दी अनुवाद:

किन्तु हे अर्जुन! जो मनुष्य मन से इन्द्रियों को वश में करके, अनासक्त भाव से कर्मेन्द्रियों द्वारा कर्मयोग का आरम्भ करता है, वही श्रेष्ठ है।

सरल व्याख्या:

भगवान सच्चे साधक की पहचान बताते हैं। वह दुनिया में रहकर अपना काम तो करता है, पर उसका मन विषयों में नहीं फँसता। वह इन्द्रियों का दमन नहीं करता, बल्कि उन्हें सही दिशा में लगा देता है। ऐसा व्यक्ति समाज में रहते हुए भी एक कमल के फूल की तरह अछूता और श्रेष्ठ रहता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... अनासक्त भाव से अपने कर्तव्य कर्मों को करना ही जीवन जीने की श्रेष्ठ विधि है।

श्लोक संख्या: **3.08**

> नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः |
> शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्धयेदकर्मणः || **08** ||

हिन्दी अनुवाद:

तू शास्त्र सम्मत नियत कर्म कर, क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है। कर्म न करने से तेरा शरीर निर्वाह भी सिद्ध नहीं होगा।

सरल व्याख्या:

भगवान एक व्यावहारिक बात कहते हैं। अगर कोई काम नहीं करेगा, तो उसे भोजन कहाँ से मिलेगा? शरीर को चलाने के लिए भी कर्म आवश्यक है। इसलिए आलस्य और अकर्मण्यता को छोड़कर अपने हिस्से का काम करना ही धर्म है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्म जीवन का आधार है, इसके बिना अस्तित्व ही संभव नहीं है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.09**

> यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः |
> तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर || **09** ||

हिन्दी अनुवाद:

यज्ञ (परमात्मा या दूसरों की सेवा) के लिए किए जाने वाले कर्मों के अतिरिक्त अन्य कर्मों में लगा हुआ यह मनुष्य कर्मों से बंधता है। इसलिए हे कौन्तेय! तू आसक्ति छोड़कर उसी (यज्ञ) के लिए कर्म कर।

सरल व्याख्या:

'यज्ञ' का अर्थ केवल हवन नहीं है, बल्कि वह हर कार्य है जो निस्वार्थ भाव से समाज या ईश्वर के लिए किया जाए। जब हम अपने स्वार्थ (सिर्फ मेरे लिए) के लिए काम करते हैं, तो वह बंधन बन जाता है। लेकिन जब हम कर्म को एक पूजा या सेवा बना देते हैं, तो वह हमें मुक्त कर देता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... निस्वार्थ भाव से किया गया सेवा रूपी कर्म ही मनुष्य को बंधनों से मुक्त करता है।

श्लोक संख्या: **3.10**

> सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः |
> अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् || **10** ||

हिन्दी अनुवाद:

प्रजापति ब्रह्मा ने कल्प के आदि में यज्ञ सहित प्रजाओं को रचकर उनसे कहा कि तुम लोग इस यज्ञ द्वारा वृद्धि को प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुम लोगों को इच्छित भोग प्रदान करने वाला हो।

सरल व्याख्या:

सृष्टि के आरंभ में ही यह विधान बनाया गया कि मनुष्य का जीवन 'यज्ञ' यानी परस्पर सहयोग और सेवा के बिना अधूरा है। ब्रह्मा जी ने सिखाया कि यह यज्ञ भाव ही वह कामधेनु है जो तुम्हारी सभी आवश्यकताओं को पूरा करेगा। जब हम स्वार्थ छोड़कर एक-दूसरे के हित के लिए कर्म करते हैं, तभी समाज और व्यक्ति की वास्तविक उन्नति संभव है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... निस्वार्थ कर्म और सेवा भाव ही मनुष्य की प्रगति का मूल आधार है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.11**

> देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः |
> परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ || **11** ||

हिन्दी अनुवाद:

तुम लोग इस यज्ञ द्वारा देवताओं को उन्नत करो और वे देवता तुम लोगों को उन्नत करें; इस प्रकार निस्वार्थ भाव से एक-दूसरे को उन्नत करते हुए तुम लोग परम कल्याण को प्राप्त हो जाओगे।

सरल व्याख्या:

यह जीवन एक चक्र है। जब हम अपने शुभ कर्मों से प्रकृति और दैवीय शक्तियों का पोषण करते हैं, तो बदले में वे शक्तियाँ हमें सुख और अनुकूलता प्रदान करती हैं। मनुष्य और प्रकृति के बीच यह लेन-देन जब निस्वार्थ होता है, तब वह 'परम कल्याण' का मार्ग बन जाता है। हमें प्रकृति से जो मिलता है, उसे कृतज्ञता के साथ वापस लौटाना ही धर्म है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... प्रकृति और मनुष्य के बीच परस्पर सद्भाव और कर्तव्य पालन ही सुखद जीवन की कुंजी है।

श्लोक संख्या: **3.12**

> इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः |
> तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः || **12** ||

हिन्दी अनुवाद:

यज्ञ द्वारा बढ़ाए हुए देवता तुम लोगों को बिना माँगे ही इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे। इस प्रकार उन देवताओं द्वारा दिए हुए भोगों को जो पुरुष उनको दिए बिना स्वयं भोगता है, वह निश्चय ही चोर है।

सरल व्याख्या:

सृष्टि की व्यवस्था से हमें भोजन, जल और वायु जैसे अनगिनत उपहार मिलते हैं। यदि हम इन सुखों का उपभोग तो करते हैं, लेकिन बदले में समाज या प्रकृति के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करते, तो हम एक 'चोर' के समान हैं। जो केवल लेता है और देता कुछ नहीं, वह ऋण के जाल में फँस जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... केवल अपने भोग के लिए जीना अनैतिक है; प्राप्त सुखों के बदले कर्तव्य निभाना अनिवार्य है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.13**

> यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः |
> भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् || **13** ||

हिन्दी अनुवाद:
यज्ञ से बचे हुए अन्न को खाने वाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाते हैं और जो पापी लोग केवल अपने शरीर पोषण के लिए ही अन्न पकाते हैं, वे तो पाप को ही खाते हैं।

सरल व्याख्या:
जो व्यक्ति अपने कर्मों का फल पहले दूसरों की सेवा और ईश्वर के अर्पण में लगाता है, उसका जीवन पवित्र हो जाता है। वह जो कुछ भी ग्रहण करता है, वह 'प्रसाद' बन जाता है। इसके विपरीत, जो केवल अपनी भूख और स्वार्थ को शांत करने के लिए संसाधन जुटाता है, वह अनजाने में बुराई और तनाव (पाप) को ही संचित करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... बाँटकर और सेवा भाव से जीना ही मानसिक और आध्यात्मिक शुद्धि का मार्ग है।

श्लोक संख्या: **3.14 - 3.15**

> अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः |
> यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः || **14** ||
> कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् |
> तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् || **15** ||

हिन्दी अनुवाद:
सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न की उत्पत्ति वृष्टि (वर्षा) से होती है, वृष्टि यज्ञ से होती है और यज्ञ विहित कर्मों से उत्पन्न होने वाला है। कर्म समुदाय को तू वेद से उत्पन्न जान और वेद अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हुआ है; इससे सिद्ध होता है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ कर्म की दिव्यता का विज्ञान समझा रहे हैं। जीवन अन्न पर, अन्न वर्षा पर और वर्षा प्रकृति के संतुलन (यज्ञ) पर टिकी है। यह यज्ञ श्रेष्ठ कर्मों से संभव होता है और ऐसे कर्मों का ज्ञान अविनाशी परमात्मा से आता है। अतः जब भी कोई निस्वार्थ कर्म किया जाता है, वहाँ साक्षात परमात्मा मौजूद होते हैं।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... हमारे छोटे से छोटे कर्तव्य कर्म का गहरा संबंध उस अनंत ईश्वरीय व्यवस्था से है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.16**

> एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः |
> अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति || **16** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे पार्थ! जो पुरुष इस लोक में इस प्रकार चलाए हुए सृष्टि-चक्र के अनुसार नहीं वर्तता (कर्तव्य पालन नहीं करता), वह इन्द्रिय-भोगों में रमण करने वाला पापायु पुरुष व्यर्थ ही जीता है।

सरल व्याख्या:
यह संपूर्ण ब्रह्मांड एक चक्र की तरह घूम रहा है जहाँ हर अंश दूसरे के काम आ रहा है। जो मनुष्य इस चक्र को जानते हुए भी आलस्यवश अपना कर्तव्य पूरा नहीं करता और केवल इन्द्रियों के सुख में डूबा रहता है, उसका जीवन व्यर्थ है। वह सृष्टि की लय को बिगाड़ता है और स्वयं भी अशांति प्राप्त करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सृष्टि के नियमों और कर्तव्यों की अवहेलना करने वाला व्यक्ति अपना जीवन निष्फल कर लेता है।

श्लोक संख्या: **3.17**

> यस्त्वारतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः |
> आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते || **17** ||

हिन्दी अनुवाद:
परन्तु जो मनुष्य आत्मा में ही प्रीति रखने वाला, आत्मा में ही तृप्त और आत्मा में ही संतुष्ट है, उसके लिए कोई कर्तव्य शेष नहीं रहता।

सरल व्याख्या:
जब कोई व्यक्ति निरंतर साधना और निष्काम कर्म करते हुए आत्मज्ञान की उस अवस्था में पहुँच जाता है जहाँ उसकी खुशी किसी बाहरी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति पर निर्भर नहीं रहती, तब वह कर्मों के 'बंधन' से मुक्त हो जाता है। वह स्वयं में ही पूर्ण है, इसलिए उसे अब कुछ पाने के लिए कर्म करने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... पूर्ण आत्मतृप्ति की अवस्था प्राप्त होने पर ही व्यक्ति कर्मों के दायित्व से ऊपर उठता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.18**

> नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन |
> न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः || **18** ||

हिन्दी अनुवाद:
उस महापुरुष का इस विश्व में न तो कर्म करने से कोई प्रयोजन रहता है और न ही कर्मों के न करने से; तथा समस्त प्राणियों में भी उसका किसी स्वार्थ का संबंध नहीं रहता।

सरल व्याख्या:
जो व्यक्ति आत्मज्ञानी हो चुका है, वह कर्मों के बंधन से ऊपर उठ जाता है। वह इसलिए कर्म नहीं करता कि उसे कुछ पाना है, और न ही इसलिए कर्म छोड़ता है कि उसे कुछ बचाना है। उसकी प्रसन्नता उसके भीतर से आती है, बाहर के किसी व्यक्ति या वस्तु से नहीं। वह पूर्णतः स्वतंत्र है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... आत्मज्ञानी पुरुष फल की इच्छा से मुक्त होकर केवल लोक-कल्याण के लिए सहज भाव से कार्य करता है।

श्लोक संख्या: **3.19**

> तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर |
> असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः || **19** ||

हिन्दी अनुवाद:
इसलिए तू निरंतर आसक्ति से रहित होकर सदा अपने कर्तव्य कर्म को कर; क्योंकि आसक्ति रहित होकर कर्म करता हुआ मनुष्य परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

सरल व्याख्या:
चूँकि अभी वह पूर्ण अवस्था नहीं आई जहाँ कर्म स्वतः शांत हो जाएँ, इसलिए भगवान अर्जुन को 'अनासक्त' (Detached) रहने की सलाह देते हैं। काम करना तो जरूरी है, पर काम में फँसना गलत है। जब हम फल की चिंता छोड़कर केवल कर्म पर ध्यान देते हैं, तो वही कर्म हमारी साधना बन जाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... फल की आसक्ति छोड़कर किया गया निरंतर कर्म ही ईश्वर तक पहुँचने का सीधा मार्ग है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.20**

> कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः |
>
> लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि || **20** ||

हिन्दी अनुवाद:

राजा जनक जैसे अनेक ज्ञानी जन भी कर्मों के द्वारा ही परम सिद्धि को प्राप्त हुए थे। इसलिए लोक-कल्याण (लोक-संग्रह) को देखते हुए भी तुझे कर्म करना ही उचित है।

सरल व्याख्या:

भगवान उदाहरण देते हैं कि बड़े-बड़े राजाओं ने महलों में रहकर और राज-काज संभालते हुए भी मोक्ष पाया। उन्होंने कर्म को बाधा नहीं माना। ज्ञानी व्यक्ति इसलिए कर्म करता है ताकि वह समाज को रास्ता दिखा सके और संसार की व्यवस्था बनी रहे। इसे 'लोक-संग्रह' कहा जाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाना और आदर्श प्रस्तुत करना साधना का ही एक अंग है।

श्लोक संख्या: **3.21**

> यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः |
>
> स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते || **21** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्रेष्ठ पुरुष जो-जो आचरण करता है, अन्य मनुष्य भी वैसा-वैसा ही आचरण करते हैं। वह जो कुछ प्रमाण (आदर्श) प्रस्तुत कर देता है, समस्त जन-समुदाय उसी के अनुसार चलने लगता है।

सरल व्याख्या:

आम लोग हमेशा अपने से ऊपर के व्यक्तियों को देखते हैं। अगर किसी समाज के मार्गदर्शक (नेता, माता-पिता या गुरु) आलसी हो जाएँ या धर्म छोड़ दें, तो पूरी जनता भटक जाएगी। इसलिए श्रेष्ठ व्यक्तियों पर यह बड़ी जिम्मेदारी है कि वे कठिन समय में भी अपने कर्तव्य से न डिगें।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... हमारे आचरण का प्रभाव पूरे समाज पर पड़ता है, इसलिए हमें एक आदर्श व्यक्तित्व प्रस्तुत करना चाहिए।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.22**

> न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन |
> नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि || **22** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे पार्थ! तीनों लोकों में मेरे लिए न तो कुछ कर्तव्य है और न ही कोई ऐसी वस्तु है जिसे प्राप्त करना बाकी हो, फिर भी मैं कर्म में ही लगा रहता हूँ।

सरल व्याख्या:
भगवान स्वयं का उदाहरण देते हैं। वे पूर्ण हैं, उन्हें किसी भी कर्म से कुछ हासिल नहीं करना है, फिर भी वे एक रथ चलाने वाले के रूप में अर्जुन की सेवा कर रहे हैं। वे सिखा रहे हैं कि जब स्वयं ईश्वर कर्म कर रहे हैं, तो मनुष्य को कर्मों का त्याग करने का अहंकार नहीं करना चाहिए।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्म केवल अभाव की पूर्ति के लिए नहीं, बल्कि सृष्टि की मर्यादा बनाए रखने के लिए किया जाता है।

श्लोक संख्या: **3.23**

> यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः |
> मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः || **23** ||

हिन्दी अनुवाद:
क्योंकि हे पार्थ! यदि कदाचित् मैं सावधान होकर कर्मों में न लगूँ, तो सब मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करेंगे।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि लोग उन्हें अपना आदर्श मानते हैं। यदि वे कर्म करना बंद कर दें, तो पूरी दुनिया इसे बहाना बनाकर आलसी और अकर्मण्य हो जाएगी। ईश्वर का अवतार मनुष्य को सक्रिय और जागृत बनाने के लिए होता है, न कि उसे आलस्य की ओर धकेलने के लिए।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... श्रेष्ठ पदों पर बैठे लोगों को अपनी जिम्मेदारी के प्रति हमेशा सावधान रहना चाहिए।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.24**

> उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् |
> सङ्करस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः || **24** ||

हिन्दी अनुवाद:
यदि मैं कर्म न करूँ तो ये सब लोक नष्ट-भ्रष्ट हो जाएँगे और मैं वर्णसंकरता (अव्यवस्था) का करने वाला होऊँगा तथा इस समस्त प्रजा का विनाश करने वाला बनूँगा।

सरल व्याख्या:
भगवान समझाते हैं कि कर्म ही इस सृष्टि को थामे हुए है। यदि सूरज उगना बंद कर दे या हवा बहना बंद कर दे, तो प्रलय आ जाएगी। वैसे ही यदि मनुष्य अपने कर्तव्यों से भागने लगे, तो समाज में अराजकता फैल जाएगी। कर्म का त्याग करना धर्म नहीं, बल्कि सृष्टि के विनाश का कारण बन सकता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्तव्य का त्याग सामाजिक पतन और अव्यवस्था को जन्म देता है।

श्लोक संख्या: **3.25**

> सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत |
> कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् || **25** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे भारत! कर्म में आसक्त हुए अज्ञानी जन जिस प्रकार कर्म करते हैं, आसक्ति रहित विद्वान को भी लोक-कल्याण की इच्छा से उसी प्रकार कर्म करना चाहिए।

सरल व्याख्या:
अज्ञानी व्यक्ति बहुत मेहनत करता है क्योंकि उसे फल का लालच है। भगवान कहते हैं कि ज्ञानी व्यक्ति को भी उतनी ही लगन से काम करना चाहिए, पर उसका उद्देश्य लालच नहीं बल्कि 'लोक-सेवा' होना चाहिए। कर्म में ढिलाई नहीं होनी चाहिए, केवल कर्म के पीछे का भाव बदलना चाहिए।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कुशलता और लगन ज्ञानी और अज्ञानी दोनों में होनी चाहिए, केवल उद्देश्य का अंतर होता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.26**

> न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम् |
> जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् || **26** ||

हिन्दी अनुवाद:
कर्मों में आसक्ति वाले अज्ञानी पुरुषों की बुद्धि में विद्वान को भ्रम उत्पन्न नहीं करना चाहिए, बल्कि स्वयं योग में स्थित होकर और सब कर्मों को अच्छी तरह करते हुए उनसे भी वैसा ही करवाना चाहिए।

सरल व्याख्या:
अगर कोई ज्ञानी अचानक अज्ञानियों से कहे कि "कर्म सब माया है, इसे छोड़ दो", तो वे अज्ञानी कर्म तो छोड़ देंगे पर ज्ञान नहीं पा सकेंगे। इससे वे भ्रमित हो जाएंगे। ज्ञानी का काम है कि वह खुद कर्म करके दिखाए और धीरे-धीरे दूसरों को भी निष्काम कर्म की ओर प्रेरित करे।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... उपदेश से अधिक प्रभावशाली स्वयं का आचरण होता है, जो दूसरों को सही दिशा देता है।

श्लोक संख्या: **3.27**

> प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः |
> अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते || **27** ||

हिन्दी अनुवाद:
वास्तव में सब कर्म प्रकृति के गुणों द्वारा किए जाते हैं, किन्तु अहंकार से मोहित अंतःकरण वाला पुरुष 'मैं कर्ता हूँ' ऐसा मानता है।

सरल व्याख्या:
साधना का एक महत्वपूर्ण पड़ाव यह जानना है कि शरीर, मन और इन्द्रियाँ प्रकृति के तीन गुणों (सत्, रज, तम) के प्रभाव में काम कर रही हैं। जैसे मोटर बिजली से चलती है, वैसे ही शरीर प्रकृति से चल रहा है। 'मैं कर रहा हूँ'—यह विचार ही वह पर्दा है जो हमें सत्य से दूर रखता है। इस अहंकार को मिटाना ही कर्मयोग का लक्ष्य है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्तापन का भाव ही अज्ञान का मूल है, जो हमें कर्मों के बंधन में बाँधता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.28**

> तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः |
> गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते || **28** ||

हिन्दी अनुवाद:

परन्तु हे महाबाहो! गुण-विभाग और कर्म-विभाग के तत्त्व को जानने वाला महापुरुष यह मानकर कि 'गुण ही गुणों में बरत रहे हैं', उनमें आसक्त नहीं होता।

सरल व्याख्या:

ज्ञानी व्यक्ति यह समझ लेता है कि इन्द्रियाँ (जो प्रकृति के गुणों से बनी हैं) अपने विषयों में (जो भी गुणों से बने हैं) काम कर रही हैं। वह स्वयं को उस क्रिया से अलग एक साक्षी (Observer) के रूप में देखता है। वह जानता है कि वह आत्मा है और आत्मा कुछ नहीं करती। इस बोध के कारण वह कर्म करते हुए भी बंधन मुक्त रहता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... स्वयं को प्रकृति के कार्यों से पृथक अनुभव करना ही वास्तविक स्वतंत्रता है।

श्लोक संख्या: **3.29**

> प्रकृतेर्गुणसम्मूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु |
> तानकृत्स्नविदो मन्दान्कृत्स्नविन्न विचालयेत् || **29** ||

हिन्दी अनुवाद:

प्रकृति के गुणों से अत्यंत मोहित हुए मनुष्य गुणों और कर्मों में आसक्त रहते हैं; उन पूर्णतया न समझने वाले मंदबुद्धि अज्ञानियों को पूर्ण ज्ञानी विचलित न करे।

सरल व्याख्या:

जो लोग पूरी तरह संसार के भोगों और शरीर के मोह में फँसे हैं, वे अभी सत्य को नहीं समझ सकते। उन्हें एकदम से बड़े प्रवचन देकर उनके विश्वास को नहीं हिलाना चाहिए। ज्ञानी को धैर्य रखना चाहिए और उन्हें धीरे-धीरे उनकी अपनी क्षमता के अनुसार उन्नति की ओर ले जाना चाहिए।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... ज्ञान देने में पात्रता का ध्यान रखना आवश्यक है ताकि अज्ञानी भ्रमित न हों।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.30**

> मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा |
> निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः || **30** ||

हिन्दी अनुवाद:
मुझमें अपने सब कर्मों को अर्पित करके, अध्यात्म बुद्धि के साथ, आशा, ममता और संताप से रहित होकर तू युद्ध कर।

सरल व्याख्या:
यह कर्मयोग का सर्वोच्च उपदेश है। भगवान कहते हैं—"कर्तापन मुझे सौंप दो, फल की उम्मीद छोड़ दो, 'मेरा' का भाव हटा दो और मन की घबराहट को मिटाकर अपना कर्तव्य पूरा करो।" जब हम ईश्वर को केंद्र में रखकर काम करते हैं, तो युद्ध जैसा कठिन कार्य भी एक पवित्र साधना बन जाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वरार्पण बुद्धि और मानसिक शांति के साथ किया गया कर्म ही जीवन का लक्ष्य है।

श्लोक संख्या: **3.31 - 3.32**

> ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः |
> श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः || **31** ||
> ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम् |
> सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः || **32** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो मनुष्य दोष दृष्टि से रहित होकर और श्रद्धापूर्वक मेरे इस मत का सदा अनुसरण करते हैं, वे भी कर्मों के बंधन से मुक्त हो जाते हैं। किन्तु जो लोग मुझमें दोष निकालते हुए मेरे इस मत का अनुसरण नहीं करते, उन सबको तू ज्ञान में मोहित और नष्ट हुआ ही समझ।

सरल व्याख्या:
भगवान के शब्दों में श्रद्धा रखना जरूरी है। जो लोग केवल कमियाँ ढूँढते हैं, वे ज्ञान की गहराई को कभी नहीं छू सकते। जो इस मार्ग पर चलता है, वह कर्मों के जाल से निकल जाता है। जो अहंकारवश इसका विरोध करता है, वह अपनी बुद्धि का ही नुकसान करता है।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... श्रद्धापूर्वक सत्य को स्वीकार करना ही प्रगति का मार्ग है, जबकि संशय और दोष-दृष्टि विनाश का कारण है।

Satyanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.33**

> सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि |
> प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति || **33** ||

हिन्दी अनुवाद:

ज्ञानी पुरुष भी अपनी प्रकृति (स्वभाव) के अनुसार ही चेष्टा करता है; क्योंकि सभी प्राणी अपनी प्रकृति को ही प्राप्त होते हैं, फिर इसमें किसी का हठ (दमन) क्या करेगा?

सरल व्याख्या:

हर इंसान अपने जन्मजात संस्कारों और स्वभाव से बंधा है। यहाँ तक कि ज्ञानी का भी अपना एक विशेष स्वभाव होता है। भगवान कहते हैं कि जबरदस्ती अपनी प्रवृत्तियों को दबाने से काम नहीं चलेगा। स्वभाव को धीरे-धीरे साधना के माध्यम से दिशा देनी पड़ती है, उसे कुचलना संभव नहीं है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... अपनी प्रकृति को जानकर उसे उचित दिशा देना ही बुद्धिमानी है, व्यर्थ का दमन नहीं।

श्लोक संख्या: **3.34**

> इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ |
> तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ || **34** ||

हिन्दी अनुवाद:

इन्द्रिय-इन्द्रिय के अर्थ में (विषयों में) राग और द्वेष छिपे हुए स्थित हैं; मनुष्य को उन दोनों के वश में नहीं होना चाहिए, क्योंकि वे दोनों ही इसके मार्ग में रुकावट डालने वाले शत्रु हैं।

सरल व्याख्या:

जैसे ही हम कुछ देखते या सुनते हैं, या तो हमें उससे प्रेम (राग) हो जाता है या नफरत (द्वेष)। भगवान कहते हैं कि ये दोनों ही जंजीरें हैं। साधक को इन दोनों प्रतिक्रियाओं से ऊपर उठना चाहिए। जो चीज मिल रही है उसे बिना मोह के स्वीकार करना और जो नहीं है उसे बिना द्वेष के छोड़ना ही साधना है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... राग और द्वेष ही हमारी प्रगति के असली बाधक हैं, जिनसे सावधान रहना चाहिए।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.35**

> श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् |
> स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः || **35** ||

हिन्दी अनुवाद:

अच्छी प्रकार आचरण किए हुए दूसरे के धर्म की अपेक्षा, गुणों से रहित अपना धर्म श्रेष्ठ है। अपने धर्म में मरना भी कल्याणकारी है, किन्तु दूसरे का धर्म भय को देने वाला है।

सरल व्याख्या:

स्वधर्म का अर्थ है वह कर्तव्य जो आपके स्वभाव के अनुसार है। दूसरों की नकल करना मानसिक अशांति लाता है। भले ही आपका काम छोटा हो, पर यदि वह आपका स्वाभाविक धर्म है, तो वही आपको शांति देगा। पराया धर्म (स्वभाव के विपरीत काम) ऊपर से कितना भी अच्छा लगे, वह अंततः नुकसान ही पहुँचाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... अपनी सहज प्रकृति के अनुसार कर्तव्य पालन करना ही आत्मिक संतोष का मार्ग है।

श्लोक संख्या: **3.36**

> अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः |
> अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः || **36** ||

हिन्दी अनुवाद:

अर्जुन ने पूछा—हे वार्ष्णेय! फिर यह मनुष्य न चाहता हुआ भी किससे प्रेरित होकर पाप का आचरण करता है, मानो उसे किसी ने बलपूर्वक लगा दिया हो?

सरल व्याख्या:

अर्जुन हम सबकी व्यथा पूछ रहा है। हम जानते हैं कि क्रोध या लालच बुरा है, फिर भी हम हार जाते हैं। वह कौन सी गुप्त शक्ति है जो हमें गलत काम करने पर मजबूर करती है?

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.37**

> काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः |
> महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् || **37** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्री भगवान बोले—रजोगुण से उत्पन्न होने वाला यह 'काम' (इच्छा) ही है और यही 'क्रोध' है। यह बहुत खाने वाला (कभी न तृप्त होने वाला) और बड़ा पापी है; इसे ही तू इस विषय में अपना शत्रु जान।

सरल व्याख्या:

असली दुश्मन हमारी इच्छाएँ (काम) हैं। जब इच्छा पूरी नहीं होती, तो वह क्रोध में बदल जाती है। यह इच्छा कभी खत्म नहीं होती, यह आग में घी की तरह है। यही वह शक्ति है जो हमसे गलत काम करवाती है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... अनियंत्रित कामनाएँ ही सब बुराइयों की जड़ और हमारी सबसे बड़ी दुश्मन हैं।

श्लोक संख्या: **3.38**

> धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च |
> यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् || **38** ||

हिन्दी अनुवाद:

जिस प्रकार धुएँ से अग्नि, धूल से दर्पण और झिल्ली से गर्भ ढका रहता है, उसी प्रकार उस काम (इच्छा) के द्वारा यह ज्ञान ढका हुआ है।

सरल व्याख्या:

हम सबके भीतर ज्ञान का प्रकाश है, पर उसे कामनाओं के धुएँ ने ढँक रखा है। जैसे गंदे शीशे में चेहरा नहीं दिखता, वैसे ही वासनाओं से भरे मन में परमात्मा का दर्शन नहीं होता। यह आवरण जितना गहरा होगा, मनुष्य उतना ही भ्रमित रहेगा।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... इच्छाएँ हमारे विवेक को धुंधला कर देती हैं, जिससे हम सत्य को नहीं देख पाते।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.39**

> आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा |
> कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च || **39** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे कौन्तेय! इस कभी न तृप्त होने वाली और अग्नि के समान जलने वाली कामरूपी ज्ञानियों के नित्य शत्रु द्वारा मनुष्य का ज्ञान ढका हुआ है।

सरल व्याख्या:

इच्छा एक ऐसा शत्रु है जो कभी दोस्त नहीं बनता। अज्ञानी को तो लगता है कि इच्छा पूरी होने पर शांति मिलेगी, पर ज्ञानी जानता है कि इच्छा तो आग की तरह है जो और बढ़ेगी। यह हमारे विवेक को निरंतर जलाती रहती है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कामनाओं की पूर्ति से शांति नहीं मिलती, बल्कि वे और अधिक प्रबल होती जाती हैं।

श्लोक संख्या: **3.40**

> इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते |
> एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् || **40** ||

हिन्दी अनुवाद:

इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि—ये सब इस काम के निवास स्थान कहे जाते हैं। यह काम इन सबके द्वारा ही ज्ञान को ढँककर जीवात्मा को मोहित करता है।

सरल व्याख्या:

दुश्मन कहाँ छिपा है? वह हमारी इन्द्रियों में (देखने-सुनने के लालच में), हमारे मन में (ख्वाबों में) और हमारी बुद्धि में (गलत तर्कों में) छिपा बैठा है। वह यहीं से हमें कंट्रोल करता है और हमें अंधकार की ओर ले जाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... आत्म-संयम के लिए इन्द्रियों, मन और बुद्धि को शुद्ध करना अनिवार्य है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.41**

> तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ |
> पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् || **41** ||

हिन्दी अनुवाद:
इसलिए हे भरतश्रेष्ठ! तू पहले इन्द्रियों को वश में करके, ज्ञान और विज्ञान का नाश करने वाले इस पापी काम को निश्चय ही मार डाल।

सरल व्याख्या:
भगवान समाधान बताते हैं—सबसे पहले अपनी इन्द्रियों पर ब्रेक लगाओ। जब तक बाहरी इनपुट (देखना, सुनना) कंट्रोल में नहीं होगा, मन शांत नहीं होगा। इस इच्छा रूपी शत्रु को खत्म करना ही होगा क्योंकि यह केवल सुख ही नहीं छीनता, बल्कि हमारे सोचने-समझने की शक्ति (ज्ञान-विज्ञान) को भी नष्ट कर देता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... इन्द्रिय-निग्रह ही इच्छाओं पर विजय पाने का पहला और अनिवार्य कदम है।

श्लोक संख्या: **3.42**

> इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः |
> मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः || **42** ||

हिन्दी अनुवाद:
शरीर से परे इन्द्रियाँ कही जाती हैं, इन्द्रियों से परे मन है, मन से परे बुद्धि है और जो बुद्धि से भी परे है, वह 'वह' (आत्मा) है।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ एक नक्शा देते हैं। हमारा शरीर सबसे कमजोर है, उससे ताकतवर इन्द्रियाँ हैं, उनसे ताकतवर मन है, मन से ताकतवर बुद्धि है। लेकिन इन सबसे ऊपर 'आत्मा' है। अगर हम खुद को आत्मा के स्तर पर खड़ा कर लें, तो हम मन और इन्द्रियों को आसानी से काबू कर सकते हैं।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... आत्मा की शक्ति सर्वोच्च है, और उसकी शरण में रहकर ही मन को जीता जा सकता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **3.43**

> एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना |
> जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् || **43** ||

हिन्दी अनुवाद:

इस प्रकार बुद्धि से परे उस आत्मा को जानकर और बुद्धि के द्वारा मन को वश में करके, हे महाबाहो! तू इस कामरूपी दुर्जेय शत्रु को मार डाल।

सरल व्याख्या:

इस अध्याय का निष्कर्ष है—अपनी आत्मिक शक्ति को पहचानो। जब तुम जान जाओगे कि तुम उस अविनाशी परमात्मा का हिस्सा हो, तो ये तुच्छ सांसारिक इच्छाएं तुम्हें नहीं डरा पाएंगी। अपनी बुद्धि को आत्मा में स्थिर करो और फिर उस स्थिर बुद्धि से इस कठिन शत्रु 'काम' को परास्त करो। यही असली युद्ध है और यही कर्मयोग की विजय है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... आत्म-साक्षात्कार ही सभी मानसिक विकारों और इच्छाओं पर अंतिम विजय पाने का उपाय है।

Satyaanubhuti Ashram

॥ इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मयोगो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥

Satyaanubhuti Ashram